अमर उजाला

प्रवाह

नई दिल्ली । बुधवार, 29 मई 2019

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

बहुत सारे लोग पौधे लगाते हैं, लेकिन उनमें से कुछ को ही उसका फल मिलता है।
-मौलाना अबुल कलाम आजाद

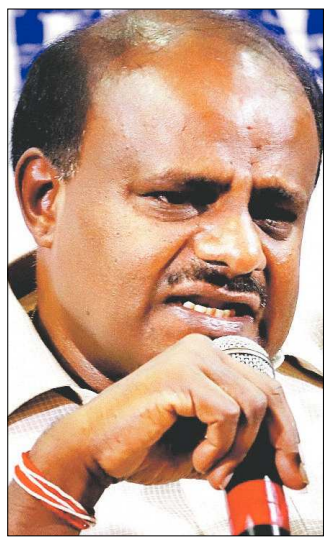

बुरी तरह से हार के बाद कुमारस्वामी के पुत्र निखिल द्वारा एक पांच सितारा होटल में किए गए कथित हंगामे की खबर प्रकाशित करने वाले कन्नड़ अखबार के खिलाफ पुलिस में दर्ज किया गया मामला सत्ता के दुरुपयोग का एक और उदाहरण है।

निशाना मीडिया पर

कर्नाटक

पुलिस ने पूर्व प्रधानमंत्री एच डी देवगौड़ा के पोते और राज्य के मुख्यमंत्री एच डी कुमारस्वामी के पुत्र निखिल से संबंधित एक खबर के प्रकाशन को लेकर एक कन्नड़ अखबार के मालिक-संपादक के खिलाफ आईपीसी की कई धाराओं के तहत मामला दर्ज किया है, यह प्रेस की स्वतंत्रता पर हमले का एक और मामला तो है ही, इसने एक बार फिर सत्ता के दुरुपयोग को भी उजागर किया है। यह तो एक अलग मुद्दा है ही कि निखिल को सिर्फ पूर्व प्रधानमंत्री का पोता और मुख्यमंत्री का पुत्र होने के नाते ही जनता दल (एस) की ओर से मांड्या लोकसभा सीट से उम्मीदवार बनाया गया था, जहां वह भाजपा समर्थित निर्दलीय उम्मीदवार सुमालता अंबरीश से पराजित हो गए। कन्नड़ अखबार *विश्ववाणी* के मुताबिक चुनाव में पराजित होने के बाद कथित रूप से नशे की हालत में निखिल ने एक पांच सितारा होटल में हंगामा किया और अपने दादा के साथ बदतमीजी की। अखबार के मालिक-संपादक विश्वेसर भट्ट का कहना है कि यह आलेख सूत्र के हवाले से प्रकाशित किया गया था और वह इस पर कायम हैं। भूलना नहीं चाहिए कि चुनाव के दौरान टिकट बंटवारे को लेकर देवगौड़ा के परिवार में कितनी खींचतान हुई थी और खबर के मुताबिक निखिल इसलिए नाराज थे, क्योंकि उनके दादा ने कांग्रेस नेताओं का वैसा समर्थन नहीं जुटाया जैसा कि उन्होंने हासन सीट पर उनके चचेरे भाई प्रज्वल रेवन्ना के पक्ष में जुटाया था। वास्तव में कर्नाटक में जद (एस) कांग्रेस गठबंधन को भाजपा के हाथों बुरी तरह से पराजय का सामना करना पड़ा है, जहां जद (एस) सिर्फ हासन सीट ही जीत सका! कन्नड़ अखबार के खिलाफ कुमारस्वामी सरकार का यह रवैया इसलिए हैरान नहीं करता, क्योंकि चुनाव के नतीजे आने से कुछ दिन पहले मुख्यमंत्री ने कहा था कि कथित गैर जिम्मेदाराना रिपोर्टिंग को नियंत्रित के लिए उनकी सरकार एक कानून लाने पर विचार कर रही है। इस पर भी हैरानी नहीं होनी चाहिए कि वह खुद एक खबरिया टीवी चैनल के मालिक हैं। अच्छा होता कि कुमारस्वामी जद(एस)-कांग्रेस गठबंधन की हार की असली वजहों पर मंथन करते, वह मीडिया पर हमला कर सच्चाई से ही मुंह फेरने की कोशिश कर रहे हैं, वह भी ऐसे समय, जब उनकी अपनी सरकार का अस्तित्व गंभीर संकट में है।

मोदी दोबारा के मायने

अब जब मोदी फिर से पांच साल के लिए प्रधानमंत्री बनने वाले हैं, तो विपक्ष और विपक्षी बुद्धिजीवियों का 'मोदी फोबिया' 'पैरेनोइया' में बदल गया है। वे दिन-रात 'मोदी का डर' बेचने में लगे हैं।

सुधीश पचौरी, हिंदी साहित्यकार

जो चुनाव हारे हैं, वे हार के झटके से अभी तक नहीं उबरे हैं और जो जीते हैं, वे अगले पांच साल का नक्शा बना रहे हैं। शुरू-शुरू में विपक्ष के बाईस नेता कहते रहे कि अगले प्रधानमंत्री मोदी नहीं बनेंगे। या तो गडकरी बनेंगे या फिर नया प्रधानमंत्री गठबंधन या कांग्रेस से आएगा। अब जब गठबंधन और कांग्रेस बुरी तरह से हार चुके हैं, तो उनके समर्थक बुद्धिजीवी मोदी/भाजपा की धांसू जीत और विपक्ष की हार के कारण खोजने में लगे हैं।

इनका कहना है कि विपक्ष के पास मोदी के मुकाबले कोई चेहरा नहीं था। साथ ही विपक्ष के पास भाजपा के 'राजनीतिक नैरेटिव' को मात देने वाला कोई वैकल्पिक 'राजनीतिक नैरेटिव' नहीं था।

वे चिल्लाते रहे कि मोदी कहकर भी न विदेश से कालाधन लाए, न किसी को पंद्रह लाख रुपये दिए, न किसानों को सही कीमत दी, न युवाओं को हर बरस दो करोड़ रोजगार दिए। उल्टे राफेल सौदे में भ्रष्टाचार किया और कि 'चौकीदार चोर है'! इस आलोचना के साथ विपक्षी नेता उत्तर प्रदेश के गठबंधन की सफलता की कल्पना करके कहते रहे कि उत्तर प्रदेश हारी तो भाजपा गई! जाति का गणित भाजपा को हराने की गारंटी है। जाति ही भाजपा के राष्ट्रवाद की काट है।

जब सरकार ने 'बालाकोट ऐक्शन' किया, तो विपक्षी कहने लगे कि यह अपनी विफलताओं को छिपाने के लिए किया कराया है। मोदी सिर्फ 'राष्ट्रीय सुरक्षा' के अंधराष्ट्रवादी नारे के सहारे जीतना चाहते हैं। कई एग्जिट पोल जब भाजपा को तीन सौ से ऊपर सीट देने लगे, तब भी विपक्ष कहता रहा कि एग्जिट पोल भाजपा का खेल है। लेकिन जब तेईस मई को नतीजे आए, तो भाजपा की तीन सौ तीन सीट देख विपक्ष की बोलती बंद हो गई। ऐसा क्यों हुआ? विपक्ष, कांग्रेस और उसके थिंकटैंक बुद्धिजीवी भाजपा की आसन्न जीत क्यों नहीं देख पाए? मोदी, संघ और भाजपा की ताकत और अपनी ताकत की ऐसी भीषण 'मिस रीडिंग' क्यों हुई? इसलिए कि विपक्ष अपने 'मोदी फोबिया' के चलते मोदी के दैनिक विमर्शों, संघ और भाजपा के संगठन की ताकत और उनके पांच बरस के शासन की नीतियों और उपलब्धियों को कम से कमतर करके आंकता रहा।

विपक्ष और उसके बुद्धिजीवियों की एक भी आलोचना या आरोप मोदी पर चिपक न सके। यही नहीं विपक्ष न मीडिया का प्रिय बन सका, न ही कल्पित 'नाराज जनता' तक पहुंच सका।

अब जब मोदी फिर से पांच साल के लिए प्रधानमंत्री बनने वाले हैं, तो विपक्ष और विपक्षी बुद्धिजीवियों का 'मोदी फोबिया' 'पैरेनोइया' में बदल गया है। वे दिन-रात 'मोदी का डर' बेचने में लगे हैं कि मोदी ने पहले ही सब संस्थान नष्ट कर दिए; अब जो बचे हैं, वे भी जाने वाले हैं और 'आइडिया ऑफ इंडिया' बदल जाना है, 'सेकुलिरज्म' खत्म हो जाना है और यह देश एक 'बहुमतवादी; हिंदूराष्ट्र' बन जाना है।

विपक्ष के दुर्दिनों का कारण यही 'मोदी फोबिया' है। 'मोदी फोबिया' यानी मोदी के प्रति शाश्वत अंधविरोध, अंधघृणा और अंधक्रोध! इस फोबिया के चलते वह मोदी/संघ/भाजपा की ताकत के बिंदुओं को देख ही नहीं पाते।

आजकल कोई चुनाव किसी युद्ध से कम नहीं होता, लेकिन विपक्ष ऐसा रणबांकुरा है, जो सत्तापक्ष की ताकत के असली बिंदुओं को समझने और उसी के अनुसार अपनी तैयारी करने की जगह सिर्फ अपने क्रोध और शाप से भाजपा के 'राष्ट्रवाद' को भस्म कर देना चाहता है। संघ और भाजपा का सांस्कृतिक राजनीतिक विमर्श बार-बार कहता है कि छह सौ बरस हमको (हिंदुओं को) इस्लामी शासकों ने दबाया, फिर पौने दो सौ साल तक अंग्रेजों ने रगड़ा। सत्तर-बहत्तर बरस पहले हम आजाद हुए और पिछले पांच बरस में हमने पहली बार अपनी ताकत को मोदी के रूप में महसूस किया है। संघ के मुहावरे में कहें, तो सदियों से रुका हुआ 'राष्ट्रवाद' अब अपनी 'अभिव्यक्ति' पाना चाहता है। वह उसे मोदी के रूप में पा रहा है। आम आदमी ने इसे लपक कर लिया है।

यह विमर्श कितना भी धार्मिक और क्रूर लगे और हम इससे कितने भी असहमत हों, यह नया 'राष्ट्रवाद' हमारे शाप से, हमारे अंधक्रोध से खत्म नहीं होने जा रहा।

अब हम मोदी, संघ और भाजपा के कुछ और ताकतवर बिंदुओं को देखें: पिछले पांच बरसों में भाजपा ने जनहित में कोई एक सौ तैंतीस योजनाएं लागू की हैं, इनमें प्रमुख हैं जनधन योजना, उज्ज्वला योजना, शौचालय योजना, किसानों को छह हजार रुपये सालाना राहत देने की योजना, मुद्रा लोन योजना आदि।

यही नहीं, मोदी ने तीन तलाक को खत्म करने वाली सुधारवादी और अन्य विकास योजनाओं को घोषित करके ही नहीं छोड़ दिया, बल्कि उनके लाभ लाभार्थी तक पहुंचे और वे वोट देने आएं, इसकी गारंटी भी की। इसके लिए भाजपा ने शक्तिकेंद्रों, बूथ मैनेजरों और पन्ना प्रमुखों को दिन-रात सक्रिय किया और इस तरह बीस-बाईस करोड़ लाभार्थियों, खासकर औरतों का वोट पाया! इन बीस-बाईस करोड़ लाभार्थियों के वोटों के अलावा 'मजबूत राष्ट्र' और 'मजबूत नेता' के नारे ने कम से कम दस प्रतिशत वोट का लेप ऊपर से चढ़ाया, तब मोदी इकतीस की जगह इकतालीस प्रतिशत वोट लेकर आए। 'मोदी है तो मुमकिन है' की लाइन इसीलिए नीचे तक बिकी! भाजपा ने जितनी सीट जीतने का दावा किया, उतनी ही जीतीं-यह चमत्कार से कम नहीं। विपक्ष को चाहिए कि भाजपा के इस सटीक चुनावी मैनेजमेंट को समझे। लेकिन अफसोस कि 'मजबूत सरकार' 'मजबूत देश' 'मजबूत राष्ट्र' और 'आतंकियों को घर में घुसकर मारने वाले' 'मजबूत नेता' के नारों की लोकप्रियता की ताकत को विपक्ष अभी तक नहीं समझ सका है।

बेहतर यही है कि उनके विपक्षी अपने 'मोदी फोबिया' से उबरें और नए सिरे से इस नए मोदी को समझें और मोदी के उस नए विमर्श को समझें, जो जीत के बाद संसद के केंद्रीय कक्ष के मोदी के भाषण में गूंजा है, तभी विपक्ष अपने विमर्श को मोदी से सवाया बना सकता है।

अंतर्ध्वनि

>> शमशेर बहादुर सिंह

काव्य-कला समेत जीवन के सारे व्यापार लीला ही हैं

कवि का कर्म अपनी भावनाओं में, अपनी प्रेरणाओं में, अपने आंतरिक संस्कारों में, समाज-सत्य के मर्म को ढालना—उसमें अपने को पाना है, और उस पाने को अपनी पूरी कलात्मक क्षमता से पूरी सच्चाई के साथ व्यक्त करना है, जहां तक वह कर सकता हो। कविता में सामाजिक अनुभूति काव्य-पक्ष के अंतर्गत ही महत्वपूर्ण हो सकती है। काव्य-कला समेत जीवन के सारे व्यापार एक लीला ही हैं—और यह लीला मनुष्य के सामाजिक जीवन के उत्कर्ष के लिए निरंतर संघर्ष की ही लीला है। भाषा की जान होता है मुहावरा। अगर कविता (जिसे कहते हैं) 'जीवन से फूटकर' निकलती है, तो उसमें जीवन की सारी बेताब उलझनें और आशाएं और शंकाएं और कोशिशें और हिम्मतें कवि के अंदर की पूरी ईमानदारी के साथ अपने सरगम के पूरे बोल बजाने लगेंगी। कला कैलेंडर की चीज नहीं है। वह कलाकार की अपनी बहुत निजी चीज है। जितनी ही अधिक वह उसकी अपनी निजी है, उतनी ही कालांतर में वह औरों की भी हो सकती है—अगर वह सच्ची है, कला-पक्ष और भाव-पक्ष दोनों ओर से। वह 'अपने-आप' प्रकाशित होगी। और कवि के लिए वह सदैव कहीं न कहीं प्रकाशित है—अगर वह सच्ची कला है, पुष्ट कला है। प्रकाशन-प्रदर्शन औसत-अक्षम कलाकार को खा जाता है। प्रभाव सभी कवियों और कलाकारों पर पड़ते हैं। अनोखी और अजीब और नई चीजें जरूरी नहीं कि बेशकीमती भी हों। वह परखने पर हल्की और घटिया भी हो सकती हैं। सारी कलाएं एक-दूसरे में समोई हुई हैं, हर कला-कृति दूसरी कलाकृति के अंदर से झांकती है। भाषा की अवहेलना किसी भी रचना को सहज ही साहित्य के क्षेत्र से बाहर फेंक देती है और शिल्प की अवहेलना कला के क्षेत्र से।

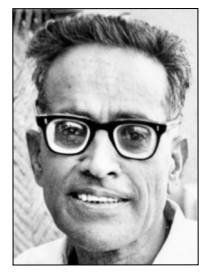

-हिंदी के दिवंगत साहित्यकार

मंजिलें और भी हैं

>> शैनदीप अरोड़ा

बेजुबान जीवों का पेट भरने को पढ़ाती हूं कोचिंग

मैं हरियाणा के सोनीपत की रहने वाली हूं। अभी मैं बायोटेक्नोलॉजी में इंजीनियरिंग कर रही हूं। बचपन से मैंने देखा, मेरे ननिहाल में कुत्ते, बिल्ली जैसे कई जानवर हुआ करते थे, जिनकी देखभाल की जाती थी। वहीं का असर था कि मुझे पर्यावरण और जानवरों के प्रति गहरा लगाव हो गया। एक बार हमारे घर के बाहर रोड पर कुत्ते के छोटे-से बच्चे को एक गाड़ी ने टक्कर मार दी जिससे उसे गहरी चोट आई। मैं और पापा उसे तुरंत डॉक्टर के पास लेकर गए। हमसे कई डॉक्टरों ने कहा कि उसे बचा पाना मुश्किल है, पर मैंने हार नहीं मानी। उसके सही इलाज के लिए हम उसे दिल्ली लेकर गए, वहां उसका ऑपरेशन हुआ। उस कुत्ते के इलाज के बाद मैंने उसे अपने घर में ही रखा और उसकी देखभाल की। इसके बाद मैंने इन बेसहारा, बेजुबान जीवों की देखभाल शुरू कर दी। मैं करीब 60 से ज्यादा बेसहारा कुत्तों की देखभाल कर रही हूं। इन्हें मैं अपने परिवार का हिस्सा मानती हूं। उनके खाने-पीने या फिर स्वास्थ्य जरूरतों में कोई कमी न आए, इसके लिए मैंने कॉलेज से आने के बाद ट्यूशन पढ़ाना शुरू कर दिया। इससे हर महीने लगभग 7, 000 रूपये मिल जाते हैं, जो मैं इन जानवरों के खाने-पीने और चिकित्सा पर खर्च करती हूं। मैं एक मध्यम आयवर्ग परिवार से हूं, इसलिए जितना भी हमसे इनके लिए हो पाता है, हम करते हैं। अपने घर के बाहर इनके लिए दो छोटे-छोटे शेल्टर होम भी बनवाए हैं, जहां पर ये जीव किसी भी मौसम में आकर आराम से सो सकते हैं। कॉलेज जाने से पहले गली में इन्हें खाना खिलाती हूं। इसके अलावा अपनी यूनिवर्सिटी में भी असहाय घूमने वाले कुत्तों के लिए खाना लेकर जाती हूं। सर्दियों में इनके लिए रजाई और गर्म कम्बल आदि की व्यवस्था भी रहती है। पर्यावरण के प्रति प्रेम और जागरूकता लाने के लिए मैं ट्यूशन पढ़ने आने वाले बच्चों को प्रकृति के प्रति संवेदनशील रहना भी सिखाती हूं। परिणामस्वरूप अब ये बच्चे अपने जन्मदिन पर पौधे लगाना चाहते हैं और इन जानवरों को खाना खिलाना चाहते हैं।

हर शहर में कम से कम एक ऐसा संगठन होना चाहिए, जो 24 घंटे जानवरों के लिए काम करे।

मेरा मानना है कि हर एक शहर में कम से कम एक ऐसा संगठन हो, जो 24 घंटे जानवरों के लिए काम करे। यदि किसी इमरजेंसी में उन्हें फोन किया जाए तो वे पहुंच सकें। अगर ऐसा हो जाए, तो वे लोग भी आगे आएंगे जो मदद तो करना चाहते हैं, लेकिन अपने यहां जानवरों को रख नहीं सकते। दरअसल लोगों को जानवरों के व्यवहार की समझ नहीं होती। मैंने और मेरे परिवार ने इस बारे में काफी रिसर्च की तो हमें पता चला कि जानवर तभी हमला करते हैं, जब उन्हें डर लगता है। मेरे बहुत से ऐसे पड़ोसी भी हैं, जो कहते हैं कि क्या जरूरत है गली में इस तरह जानवरों को इकट्ठा करने की। पर मैं इन चुनौतियों से नहीं डरती क्योंकि मुझे यह पता है कि, मैं नेक काम कर रही हूं। मेरी मां जहां हर रोज इन बेजुबान जानवरों के लिए खाना तैयार करती हैं, वहीं इनकी साफ-सफाई में पिता और भाई सहयोग करते हैं। साथ ही जानवरों के डॉक्टर कमल भी हैं, जो जरूरत पड़ने पर तत्काल आकर मदद करते हैं। मेरा मानना है कि इस तरह बेजुबानों की मदद के लिए कोई एक छोटा-सा भी कदम उठाये, तो यह भी मेरे लिए बहुत है। मुझे किसी तरह का प्रचार नहीं चाहिए। सिर्फ अपना काम कर रही हूं और जितना कर सकती हूं, उतनी मदद करती रहूंगी। बेजुबान जीवों के संरक्षण की दिशा में काफी काम करने की जरूरत है। लोगों को जानवरों से जुड़े कानूनों के बारे में जागरूक किया जाना चाहिए।

-विभिन्न साक्षात्कारों पर आधारित।

इस त्रासदी के गुनहगार कौन

गुजरात की आर्थिक राजधानी सूरत में हुई आगजनी की घटना में 21 बच्चों की मौत एक बड़ी त्रासदी है, जिसके लिए सरकारी तंत्र भी जिम्मेदार है। ऐसी दुर्घटनाओं को रोकने के लिए सुरक्षा मानकों का कड़ाई से पालन करवाया जाना चाहिए।

चुनाव परिणाम और उसके बाद के राजनीतिक घटनाक्रम में गुजरात की आर्थिक राजधानी कहे जाने वाले सूरत की आगजनी की भयावह घटना चर्चा के केंद्र में नहीं आ सकी। हालांकि इस घटना ने देश को झकझोर दिया। भारत के होनहार 15 से 22 वर्ष की उम्र के 21 बच्चों का आग में झुलसकर या आग से बचने का कोई रास्ता न देखकर कूदकर जान गंवा देना ऐसी त्रासदी है, जो नहीं होनी चाहिए थी। सूरत जैसे शहर के मुख्य इलाके में स्थित कॉम्प्लेक्स में इस तरह की आग लगना और फिर बिल्कुल असहाय की अवस्था अकल्पनीय है। इस कॉम्प्लेक्स में कोचिंग सेंटर, जिम, फैशन डिजाइनिंग इंस्टीट्यूट, नर्सिंग होम समेत कई शॉपिंग सेंटर हैं, लेकिन आग लगने के बाद बचाव का कोई उपाय नहीं था। कॉम्प्लेक्स में दूसरी और तीसरी मंजिल पर कोचिंग क्लास चलती थी। कहा जा रहा है कि आग ट्रांसफॉर्मर में शॉर्ट सर्किट से शुरू हुई। बच्चों ने जान बचाने के लिए चौथी मंजिल से कूदना शुरू कर दिया। नीचे जमा स्थानीय लोगों ने कूद रहे बच्चों को कैच करना शुरू किया, ताकि बच्चों के सिर पर सीधी चोट न आए। इस तरह लोगों ने 11 बच्चों को बचा लिया और कूदने वाले एक बच्चे को नहीं बचाया जा सका। जो 20 बच्चे नहीं कूद पाए, उनकी झुलसकर जान चली गई। कुछ की दम घुटने से मौत हो गई।

मुख्यमंत्री विजय रुपाणी ने जांच के आदेश दे दिए हैं। लेकिन कुछ बातें तो साफ हैं। एक, इस भवन में अग्निशमन की कोई व्यवस्था नहीं थी। दूसरे, आग लगने या किसी हादसे में बाहर निकलने के लिए कोई वैकल्पिक सीढ़ी भी नहीं थी। तीसरे, बड़े कॉम्प्लेक्सों में ऐसी स्थिति में कूदने वालों को बचाने के लिए जाल की व्यवस्था भी नहीं थी। यानी कुल मिलाकर आपदा की स्थिति में लोगों को भगवान के भरोसे छोड़ दिया गया था। खबरों के मुताबिक सरकारी दस्तावेज में यह कॉम्प्लेक्स तीन मंजिला इमारत है, जबकि इमारत में चार मंजिल हैं। यानी चौथी मंजिल अवैध है, जिसका निर्माण रातोंरात तो नहीं ही हुआ होगा।

अवधेश कुमार

जाहिर है, शहर विकास प्राधिकरण, पुलिस, प्रशासन, नगर निगम आदि की संलिप्तता के बगैर ऐसा संभव नहीं है। तो ऐसी त्रासदी के लिए इन सभी को जिम्मेदार क्यों नहीं माना जाए? अगर इस कॉम्प्लेक्स में अग्निशमन की व्यवस्था नहीं थी, आपातकालीन रास्ता नहीं था, तो फिर इसे व्यवहार में लाने के लिए अनापत्ति प्रमाणपत्र कैसे मिल गया? इसलिए इस घटना की जांच का दायरा विस्तृत होना चाहिए। इसमें इस कॉम्प्लेक्स का नक्शा पास करने से लेकर इसके उपयोग की अनुमति देने वाले पूरे समूह तथा अवैध मंजिल न बने इसके लिए जिम्मेदार लोगों को जांच के दायरे में लाना होगा। यह भी सोचने वाली बात है कि जब एक भवन में लगी आग में लोगों को सुरक्षित नहीं निकाला जा सका, तो यदि आग फैलकर कई भवनों को अपनी चपेट में ले लेता, तो क्या होता?

अच्छी बात है कि गुजरात सरकार ने हादसा होते ही पूरे प्रदेश के ऐसे कोचिंग सेंटरों और स्थलों को अगले आदेश तक बंद रखने का आदेश दिया है। और सारे मॉल, वाणिज्यिक कॉम्प्लेक्स, स्कूलों, कॉलेजों सबमें अग्निशमन की व्यवस्था है या नहीं, इसकी ऑडिट आरंभ हो गई है। ऑडिट का कदम सही है, पर यह ईमानदारी से हो तब।

भारत के ज्यादातर शहरों में यही स्थिति है। ज्यादातर इमारतें सुरक्षा मानकों को ताक पर रखकर बनाई गई हैं। ऐसी दुर्घटनाओं को रोकने के लिए सुरक्षा मानकों का कड़ाई से पालन करवाया जाना चाहिए। सुरक्षा के प्रति लापरवाही भारत के भविष्य की जान से खिलवाड़ है। सूरत की त्रासदी से सबक लेकर सभी राज्य सरकारें अपने यहां सुरक्षा मानकों का ऑडिट कराएं। केंद्र सरकार को भी इस दिशा में पहल करनी चाहिए।

खुली खिड़की

झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाली आबादी

विकास के नित नए आयाम छूने के बावजूद दुनिया के कई देशों में लोग झुग्गी-झोपड़ियों में रहने को मजबूर हैं। 2014 में आई एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत की कुल जनसंख्या के 24 फीसदी लोग झुग्गियों में रहते हैं।

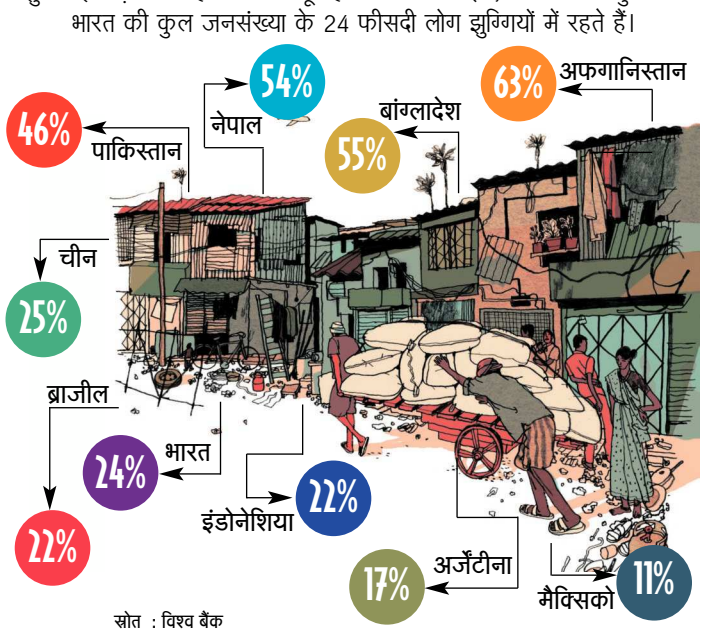

स्रोत : विश्व बैंक

सत्संग

क्रोधहीनता का असर

संत तुकाराम ने जब अपना सब कुछ दीन-दुखियों की सेवा में अर्पित कर दिया और उनके घर खाने को कुछ भी न बचा, तो उनकी पत्नी ने कहा, 'बैठे क्या हो, खेत में गन्ने खड़े हैं। एक गट्ठर बांध लाओ। आज का दिन तो निकल ही जाएगा।' तुकाराम महाराज तत्काल खेत में पहुंचे और गन्ने को काटकर उसका गट्ठर बनाया और घर की तरफ चल पड़े। इतने में लड़कों ने और भिखारियों ने गन्ने देखे तो वे उनके पीछे पड़ गए। तुकाराम ने गट्ठर में से एक-एक गन्ना निकालकर सबको बांटना शुरू किया। जब वे घर पहुंचे, तो उनके पास केवल एक ही गन्ना शेष बचा था। उनकी पत्नी बेहद भूखी थी। जब उसने अपने पति के हाथ में केवल एक ही गन्ना देखा, तो आगबबूला हो गई। उनके हाथ से गन्ना छुड़ाकर उसने उन्हें उसी से मारना शुरू कर दिया। मारते-मारते जब गन्ना टूट गया, तब उसका क्रोध शांत हुआ। किंतु तुकाराम तो मौन रहकर मार खाते रहे और उन्होंने जब गन्ने को टूटा हुआ देखा, तो वे हंसते हुए बोले, चलो अच्छा हुआ इसके दो टुकड़े हो गए। एक को तू चूस और दूसरे को मैं चूसूंगा।

क्रोध के प्रचंड दावानल के सामने क्षमा और प्रेम के अगाध-अनन्त समुद्र को देखकर उनकी पत्नी ने पश्चाताप में अपना सिर पीट लिया। तुकाराम ने जो देखा तो अपनी पगड़ी के पल्ले से उसके आंसू पोंछे और गन्ना छीलकर उसे खिला दिया।

-संकलित

हरियाली और रास्ता

तीन गायों की दोस्ती और शेर

एक शेर की कहानी, जिसने शिकार करने के लिए तीन में से एक गाय से दोस्ती गांठी।

एक जंगल में तीन गायें थीं। उसमें से एक काली गाय थी, एक सफेद और एक भूरी थी। तीनों में एक विचित्र समानता यह थी कि वे हमेशा एक साथ रहती थीं और पल भर भी अलग नहीं होती थीं। जंगल का शेर बड़े दिनों से उन पर नजरें जमाए हुए था। लेकिन शेर की मुश्किल यह थी कि वे अकेली तो रहती नहीं थी। तीनों के हमेशा साथ रहने के कारण वह उनको खा नहीं पा रहा था। शेर को अच्छी तरह से पता था कि तीनों पर एक साथ झपटने का नतीजा अच्छा नहीं होगा। उन तीनों ने अगर मिलकर उसे खदेड़ने की कोशिश की, तो उसकी मिट्टी पलीद होने में भला कितनी देर लगेगी। फिर तो कोई शेर से डरेगा ही नहीं, सभी जानवर मिलकर उसका मुकाबला करने का तरीका सीख लेंगे। ऐसे में शेर को यह तरकीब सूझी कि क्यों न उनमें से किसी एक गाय से दोस्ती की जाए। इसी योजना के तहत एक दिन शेर ने भूरी गाय के साथ दोस्ती गांठी। धीरे-धीरे भूरी गाय और शेर के बीच बातचीत बढ़ने लगी। शेर का साथ पाकर भूरी गाय में अहंकार आ गया। काली और सफेद गाय ने भूरी गाय को समझाने की बहुत कोशिश की कि शेर से दोस्ती उसके लिए ठीक नहीं। लेकिन भूरी गाय को लगता था कि सफेद और काली गायें मुझसे जलती हैं, इसी कारण वे मना कर रही हैं। भूरी गाय का स्वभाव दिन-प्रतिदिन बदलने लगा। काली और सफेद गाय से उसके झगड़े बढ़ने लगे। एक दिन शेर भूरी गाय से बोला, चलो, तुम्हें जंगल की सैर कराने ले चलता हूं। तुम्हें मैं अपना साम्राज्य दिखाता हूं। वह शेर के साथ अकेले ही जंगल में जाने को तैयार हो गई। बस फिर क्या था। घने जंगल में सही मौका देखते ही शेर ने भूरी गाय को अपना शिकार बना लिया। अंतिम समय में भूरी गाय यही सोचती रही कि काश, मैंने दोस्तों की सलाह मानी होती, तो यह दिन न देखना पड़ता।

विश्वास करने से ज्यादा महत्वपूर्ण यह है कि विश्वास किस पर करें।